स्वभाव और विभाव

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,
पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

स्वभाव और विभाव के बीच भेद रेखा खींचने वाला कभी दुखी नहीं हो सकता। मनुष्य का वास्तविक भाव स्वभाव है। अपनी आत्मा में रहना, अपनी आत्मा का निरीक्षण और परीक्षण करना स्वभाव है। हर वस्तु का अपना–अपना स्वभाव होता है। आत्मा का स्वभाव ज्ञाता द्रष्टा भाव है। आत्मा सच्चिदानन्द स्वरूप है। वह अशरीरी है। चौरासी लाख जीव योनियों की आत्मा में कोई भेद नहीं है। आत्मा तीनों कालों में एकसमान रहता है। पूर्वकृत कर्मों के कारण सृष्टि में भेद दिखलाई देता है। यही भेद विभाव है। भेद भौतिक वस्तुओं के कारण है। शरीर भी भौतिक है। यह पंचभूतों के गुण धर्म वाला है।

किसी भी वस्तु का अपने मूल स्वरूप में रहना स्वभाव है। विभाव इसका ठीक विपरीत है। पानी का स्वभाव है शीतलता। यदि पानी को गर्म कर दिया जाये तो पानी के स्वभाव में परिवर्तन हो जाता है। इसी तरह आत्मा का ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप में परिणत होना उसका स्वभाव है। काम, क्रोध, मद, लोभ इत्यादि कषाय विभाव हैं। आत्म शुद्धि साधनं धर्म इस परिभाषा के अनुसार धर्म वह तत्व है, जिससे आत्मा शुद्ध होती है। आत्मा मूल रूप से ज्ञानस्वरूप है। वस्तु का स्वभाव ही धर्म कहलाता है। जो इतर चीजें होती है वह विभाव हैं। जैसे पानी का गुण है शीतलता, अग्नि का स्वभाव है उष्णता। जब उनके गुण को विकृत किया जाता है तो उनका स्वरूप बदल जाता है। जब वह अपने स्वरूप में रहता है तो वह तत्व स्वभाव कहलाता है।

आत्मा स्वभाव से एकरूप, एकरस है। स्वभाव व्यक्ति को व्यक्ति से जोड़ता है क्योंकि सभी मानव एक समान हैं। जब धर्म, जाति और वर्ग के अनुसार उनका वर्गीकरण कर दिया जाता है तब धर्म और सम्प्रदाय का ठप्पा उन पर लग जाता है। यही विभाव है। एक उदाहरण के द्वारा इसको समझा जा सकता है। धर्म को सम्प्रदाय की जंजीर से बांध दिया जाता है तो धर्म विकृत हो जाता है। भारत में अनेक धर्म हैं– जैन, बौद्ध, सिक्ख, इस्लाम, पारसी और हिन्दू

धर्म। ये सब सम्प्रदाय हैं। सबकी अपनी–अपनी पूजा पद्धति और उपासना पद्धति है और उस पूजा पद्धति के अनुसार धर्म को संकीर्ण कर दिया जाता है, स्वभाव को विभाव में बदल दिया जाता है। धर्म मानव को मानव से जोड़ता है। धार्मिक क्रियाकलाप के आधार पर मानव अपने आस्था को प्रकट करता है। सुख–दुःख, मोक्ष इत्यादि तत्वों को प्राप्त करता है। श्रीमद्भगवद्गीता जो कि हिन्दू धर्म का एक प्रसिद्ध ग्रंथ है, इसमें आत्मा की अजरता अमरता का बड़ा दार्शनिक विवेचन किया गया है। इसमें बताया गया है कि शरीर नश्वर है और आत्मा अजर–अमर। जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर नये वस्त्रों को धारण करता है, वैसे ही आत्मा पुराने शरीर को त्यागकर नये शरीर को धारण करता है।

शरीर पंचभूतात्मक है। आत्मा इससे परे है। शुद्ध आत्मा ज्ञान दर्शन और चारित्र से युक्त है। आत्मा अरूपी है किन्तु जब यह शरीर को धारण करती है तो यह रूपी कहलाने लगती है। सच्चिदानन्द आत्मा का स्वभाव है और शरीर में आने के पश्चात् आत्मा की विभाव परिणति हो जाती है। आत्मा और शरीर दोनों भिन्न–भिन्न हैं। आत्मा चेतनायुक्त हैं और शरीर पंचभूतात्मक है। पंचभूतों में समय–समय पर परिणति होती रहती है। स्वभाव में परिवर्तन नहीं होता, किन्तु विभाव बदलते रहते हैं।

जीव के भावों की विचित्रता के अनुसार वे कर्म भी विभिन्न प्रकार की फलदान शक्ति को लेकर आते हैं, इसी से वे विभिन्न स्वभाव या प्रकृति वाले होते हैं। प्रकृति का अर्थ स्वभाव है। जिस प्रकार नीम की क्या प्रकृति है? कड़ुआपन। गुड़ की क्या प्रकृति है? मीठापन। उसी प्रकार ज्ञानावरण कर्म की क्या प्रकृति है? अर्थ का ज्ञान न होना इत्यादि। जीव के प्रदेशों की उथल–पुथल को अस्थिति तथा उथल–पुथल न होने को स्थिति कहते हैं। जिसका जो स्वभाव है, उससे च्युत न होना स्थिति है। जिस प्रकार बकरी, गाय और भैंस आदि के दूध का माधुर्य स्वभाव से च्युत न होना स्थिति है, उसी प्रकार ज्ञानावरण आदि कर्मों का अर्थ का ज्ञान न होने देना आदि स्वभाव से च्युत न होना स्थिति है। विविध प्रकार के पाक अर्थात् फल देने की शक्ति का पड़ना ही अनुभाव है।

शुभाशुभ कर्म की निर्जरा के समय सुख–दुःख रूप फल देने की शक्ति वाला अनुभाग बन्ध है। कर्म रूप से परिणत पुद्गल स्कन्धों का परमाणुओं की जानकारी करके निश्चय करना

प्रदेशबन्ध है। दो के बिना बन्ध नहीं होता। एक हाथ से ताली नहीं बज सकती, उसी प्रकार बन्ध तत्त्व भी एक के बीच में नहीं हो सकता। सांसारिक जो विषय–सामग्री है वह, और उसका जो भोक्ता है आत्मा, ये दोनों संयोग होते ही बन्ध हो जाते हैं। कर्म पुद्गलों के ग्रहण को बन्ध कहा जाता है। जीव के द्वारा कर्म पुद्गलों के ग्रहण का क्षीर–नीर की भांति परस्पर आश्लेष होता है, उसे बन्ध कहा जाता है। वह प्रवाहरूप से अनादि और जो भिन्न–भिन्न कर्म बंधते रहते हैं, उनकी अपेक्षा सादि है। मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और मन, वचन, काय की प्रवृत्ति, ये सब कर्मों के आने के द्वार होने से आस्रव हैं, आत्मा के साथ इनके संयोग को विभाव कहा जाता है। परमार्थ की चेतना जागृत हो जाने पर सब कुछ हेय प्रतीत होने लगता है। परमार्थ की भावना मोक्ष की भावना है।